ओ३म्

अस्माकं वीरा उत्तरे भवन्तु
- हमारे वीर विजयी हों

वर्ष : 30, अंक 8, 25 नवम्बर–दिसम्बर, 2015 दयानन्दाब्द 191 सृष्टि संवत् 1,96,08,53,112

आर्य वीर विजय

अमर शहीद पं. लेखराम स्मृति मासिक पत्रिका

सार्वदेशिक आर्यवीर दल हरियाणा ● 10 वर्षीय शुल्क 700 रु. ● वार्षिक शुल्क 70 रु. ● यह अंक 10 रु.

महर्षि दयानन्द सरस्वती

ओ३म्

अस्माकं वीरा उत्तरे भवन्तु

हरियाणा-दिल्ली-पंजाब-उत्तर प्रदेश-उत्तरांचल-राजस्थान-मध्यप्रदेश-गुजरात-महाराष्ट्र-हिमाचल प्रदेश

विज्ञापन की दरें (वार्षिक)

अन्तिम पृष्ठ	7000/-	अन्दर के रंगीन पृष्ठ	4000/-
अन्तिम पृष्ठ रंगीन आधा	4000/-	अन्दर का आधा (सादा)	2500/-
अन्तिम अन्दर का रंगीन	6000/-	एक विज्ञापन पट्टी 250/- प्रति पृष्ठ, प्रति अंक	

ऋग्वेद

देव दयानन्द सरस्वती

॥ ओ३म् ॥

यजुर्वेद

आर्य समाज नेहरू ग्राउण्ड फरीदाबाद

के.एल. महता दयानन्द पब्लिक स्कूल्ज़
के.एल. महता दयानंद महिला महाविद्यालय

देव दयानंद के सच्चे शिष्य बन
शिक्षा का अलख जगाया।
पूर्णाहुति में निज-उत्सर्ग कर
सेवा का धर्म निभाया।
ऋषि के सच्चे पथ पर चलकर
'महात्मा' वह कहलाया॥

महात्मा कन्हैयालाल महता

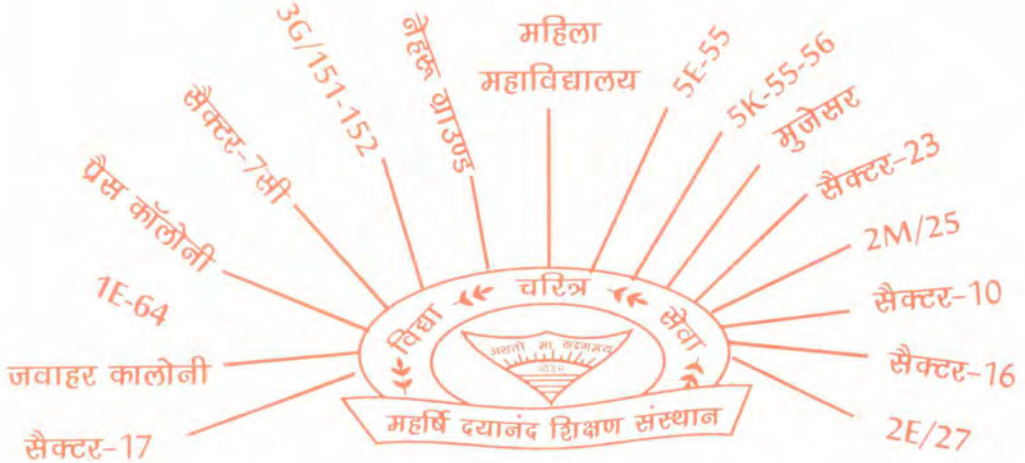

अथर्ववेद

सामवेद

फूलों का गुलदस्ता

संकलनकर्ता- मनोहर लाल आनन्द, प्रधान सम्पादक

1. भक्ति ईश्वर की आज्ञाओं का पालन है। (स्वामी दयानन्द)
2. आलस्य मनुष्य के विनाश की पहचान है। आलसी मनुष्य जीवन में उन्नति नहीं कर सकता।
3. बुराई को आग और सांप की तरह मानकर उससे सदा बचते रहो।
4. जो कुछ तुम करना चाहते हो उसका पहले से ही डिंडोरा मत पीटो, काम होने पर आप ही सब जान जायेंगे।
5. क्रोध में जब जुबान खुलती है, तब विवेक की आंखें बंद हो जाती हैं। उस समय ऐसी बातें मुंह से निकलती हैं, जिसके लिये केवल इसी जन्म में नहीं, कई जन्मों तक उसका फल भुगतना पड़ता है।
6. मन–पानी की तरह पतनशील है, कहीं भी गिर सकता है।
7. जगत में हम शुभ देखना, भलाई करना सीखें तो हमें अपने आप सुख मिलेगा।
8. जो शुभ है उसे तुरन्त करो। खड़ा सिरहाने काल है।
9. नकली फूल पर भौंरा, तितली नहीं आती। मनुष्य आता है।

सत्यार्थ प्रकाश महिमा गायन

सत्यार्थ प्रकाश बनाया, चमकाया सूरज ज्ञान का।
जन–जन का प्रिय बना आज सत्यार्थ प्रकाश हमारा।
जिसको पढ़कर दूर हुआ है, हृदय का अंधियारा।
सत्य ज्ञान दरशाया।। 1 ।।

चौदह गोली वाली यह पिस्तौल चली मस्तानी।
कांप उठे पाखण्डी सारे हो गये पानी–पानी।
पोपों का दल दहलाया।। 2 ।।

पण्डे, सण्डे, गोली गण्डे ठग विद्या बतलाई।
कल्पित ग्रन्थों की ऋषिवर ने पोल खोल दिखलाई।
पापों से आन बचाया।। 3 ।।

ऊंच नीच और भेदभाव की पाटी खण्दक खाई।
मत मतान्तरों के कूड़े करकट में आग लगाई।।
प्रेम का पाठ पढ़ाया।। 4 ।।

साभार 'मधुर स्मृति' से

आर्य वीर विजय

सम्पादक मण्डल

मनोहर लाल आनन्द
प्रधान सम्पादक

सतीश कौशिक
व्यवस्थापक
☎ : 9312083458

उमेद सिंह शर्मा
संचालक
☎ : 9868956786

देश बंधु आर्य
संरक्षक
☎ : 9811140360

डॉ. (श्रीमती) विमल महता
संरक्षिका
☎ : 9350266601

अजीत कुमार आर्य
संरक्षक
☎ : 09794113456

श्री शिव दत्त आर्य
संरक्षक
☎ : 9810638622

संजीव कुमार मंगला
कानूनी परामर्शदाता
☎ : 9812271456

समस्त अवैतनिक

''आर्य समाज की प्रतिष्ठा भारतीयों में एक नये जीवन की प्रतिष्ठा है, उसकी प्रगति एक दिव्य शक्ति की स्फूर्ति है। देश में महिलाओं, पतितों तथा जाति–पाँति के भेदभाव को मिटाने के लिए महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाज से बढ़कर इन नवीन विचारों के युग में किसी भी समाज ने कार्य नहीं किया। आज जो जागरण भारत में दीख पड़ता है उसका प्रायः सम्पूर्ण श्रेय आर्यसमाज को है।''

– **सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'**

19 दिसम्बर 1927

— ले. अशफाक

फांसी पर जाने से पूर्व उन्होंने यह भी कहा था—"भारत माता के रंगमंच पर अपना पार्ट हम अदा कर चुके। हमने गलत—सही जो कुछ किया, वह स्वतन्त्रता—प्राप्ति की भावना से किया। हमारे इस काम की कोई प्रशंसा करेगा तो कोई निन्दा। किन्तु हमारे साहस और वीरता की प्रशंसा हमारे दुश्मनों तक को करनी पड़ी है। क्रान्तिकारी बड़े वीर योद्धा और बड़े अच्छे वेदांती होते है। वे सदैव अपने देश की भलाई सोचा करते हैं। लोग कहते हैं कि हम देश को भयत्रस्त करते हैं, किन्तु बात ऐसी नहीं है। इतनी लम्बी मियाद तक हमारा मुकदमा चला, मगर हमने किसी एक गवाह तक को भयग्रस्त करने की चेष्टा नहीं की, न किसी मुखबिर को गोली मारी। हम चाहते तो किसी गवाह, किसी खुफिया पुलिस के अधिकारी या किसी अन्य ऐसे आदमी को मार सकते थे। किन्तु यह हमारा उद्देश्य नहीं था। हम तो कन्हाईलाल दत्त, खुदीराम बोस, गोपी मोहन साहा आदि की स्मृति में फांसी पर चढ़ जाना चाहते थे।

"जजों ने हमें निर्दयी, बर्बर, मानव—कलंक आदि विशेषणों से याद किया है। किन्तु हम पूछते हैं क्या इन जजों ने जलियावाला बाग में गोली चलाते देखा या सुना? क्या उसने निरस्त्र भारतीयों—स्त्री, पुरुष, बाल, वृद्ध सब पर गोलियाँ नहीं चलाई थी। कितने जजों ने उसे इस विशेषणों से विभूषित किया। फिर क्या यह मजाक हमारे ही साथ उड़ाने को है।

"भारतीय भाइयो, आप कोई हों, चाहे जिस धर्म या सम्प्रदाय के अनुयायी हों, परन्तु आप देशहित में एक होकर योग दीजिए। आप लोग व्यर्थ में लड़—झगड़ रहे हैं। सब धर्म एक हैं, रास्ते चाहे भिन्न—भिन्न हों, परन्तु लक्ष्य सब का एक ही है। फिर यह झगड़ा—बखेड़ा क्यों? हम मरने वाले काकोरी के अभियुक्तों के लिए आप लोग एक हो जाइए और सब मिलकर नौकरशाही का मुकाबला कीजिए। यह सोचकर कि सात करोड़ मुसलमान भारतवासियों में मैं सबसे पहला मुसलमान हूँ जो भारत माता की स्वतन्त्रता के लिए फांसी पर चढ़ रहा हूँ, मैं मन ही मन अभिमान का अनुभव कर रहा हूँ। किन्तु मैं यह विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैं हत्यारा नहीं था, जैसा कि मुझे साबित किया गया है।

"अब मैं विदा होता हूँ। ईश्वर आप सब का भला करे। इस अवसर पर ऐनुद्दीन मजिस्ट्रेट, श्री खैरात अली पब्लिक प्रासीक्यूटर, सी.आई.डी. के अधिकारी खासकर खान बहादुर तसद्दुक हुसैन साहब तथा अन्य गवाहों को धन्यवाद देना अनुचित न होगा, क्योंकि इन्हीं की कृपा से हम को यह मान—मर्यादा प्राप्त हुई। मेरे परिवार में आज तक देश—सेवा के लिए कोई त्याग न हुआ था। अब यह कलंक छूट जाएगा। अन्त में अपने साथी अभियुक्तों तथा मुखबिरों और इकबाली मुल्जिमों से भी 'वन्दे' करता हूँ।

"सब को आखिरी सलाम् भारतवर्ष सुखी हो मेरे भाई आनन्द लाभ करें।"

अशफाक चले गए, लेकिन वे देशवासियों के नाम जो सन्देश छोड़ गए, उससे हम कुछ ग्रहण कर सकें तो अच्छा है। **(अशफाक और उनका युग से)**

Auth. Distributor

Sleepwell

Sleepwell

परदे ही परदे गददे ही गददे

J.K. Singhal
S.K. Singhal

Singhal Furnishing

(Auth. Sleepwell Gallery)

Deals in : All kinds of S/W Mattress, Cushions, Pillows, Flooring Carpets, Curtains, Sofa's Clothes, Sofa Materials & Blinds.

Near Aggarwal Dharmshala, Nathu Colony, Chawla Colony, Ballabgarh-121004
Ph. : (O) 0129-2244905, J.K. : 9911706903, S.K. 9891305902

मुस्कान सुख की खान

विवाह के डेढ़ साल बाद ही, मेरे माथे का सुहाग पुछ गया। मेरा सातवाँ महीना था। अभी दो साल पहले तो नौकरी शुरु की थी, उन्होंने। सो जो कुछ बचा था वह इतना हो था कि, किसी तरह ले–देकर जरूरत पूरी की जा सके। विवाह के पहले वर्ष ही माता–पिता के स्नेह की छाया मेरे शिर पर से उठ चुकी थी और वे तो बचपन से ही मातृ–पितृ विहीन थे। भाई साहब ही एक मात्र आश्रय थे। भाई और भावज का हृदय जितना ही विशाल था, उतने ही सीमित थे उनके आर्थिक साधन। अपर्याप्त वेतन, बड़ा परिवार और कलकत्ते के एक उपनगर में तंग मकान। परन्तु स्नेहमयी भावज की देख–भाल और टहल से समय पर शशि निर्विघ्न उत्पन्न हुई।

मैं भाई साहब पर बोझ बनकर नहीं रहना चाहती थी। इसलिए प्रसव के बाद, चलने–फिरने लायक होते ही जिद पकड़ी थी। बी.ए. में नाम लिखाया। परिवार के मित्रों की दौड़–धुप और सिफारिश से फीस में माफी मिल गयी। पढ़ाई का बोझ, शोक, मानसिक–शारीरिक क्लांति, इन सबने मुझे इतना पीड़ित कर रखा था कि मेरे मुख पर सदा गम्भीरता और गम की रेखायें घिरी रहती थीं। भावज लाख समझाती कि हँसमुख रहा करो, नहीं तो शशि के मन पर दुष्प्रभाव पड़ेगा। पर मैं तो अपनी चिन्ता में डूबी हुई थी।

बी.ए. के बाद अध्यापन की ट्रेनिंग कर ली, गोरखपुर में एक बालिका–छात्रावास की सुपरिटेडेन्ट का पद मिल गया। छात्रावास के अहाते में ही अच्छा हवा–रोशनीदार मकान भी रहने को दिया गया। कलकत्ता से वहाँ पहुँचने के अगले दिन की बात है। सब सामान खोलकर ठीक–ठिकाने रख रही थी, तभी शशि की दृष्टि एक फोटो पर पड़ गई, जो मैंने वर्षों से सन्दूक में बन्दकर रख छोड़ी थी–उनकी और मेरी फोटो जो विवाह के दो तीन मास बाद उतरवायी थी। शशि ने उस पर उंगली रख कर पूछा–''अम्मा, ये कौन हैं?''''तुम्हारे बाबूजी,'' मैंने कहा। फिर दूसरा प्रश्न, ''और यह कौन है?'' इस बार शशि की उँगली मेरी तस्वीर पर थी। मैंने कहा कि, मैं हूँ। शशि क्षण–भर मुझे देखती रही। उसकी आँखों में अविश्वास था। बोली, ''पर अम्मा यह तो हँस रही है।'' तो मेरी बच्ची का विचार था कि, मैं उसकी माँ–हँस नहीं सकती। जो बात भावजा के उपदेशों से समझ में नहीं आयी थी, आज बच्ची के इन शब्दों से मेरे हृदय में पैठ गयी।

उस दिन मैंने निश्चय किया, चाहे कितनी भी चिन्ता हो, मुख पर मुस्कान बनाये रखूँगी, विशाद की काली रेखाओं को मुख पर न छाने दूँगी। आरम्भ में इस तरह हंस मुख रहना कठिन लगा, परन्तु कुछ समय बाद मुस्कान मेरे स्वभाव का अंग बन गयी और स्कूल में मेरा नाम ''मुस्कराने वाली मास्टरनी जी'' पड़ गया। अध्यापिका के रूप में मुझे जो सफलता–लोकप्रियता मिली, उसका रहस्य मेरे विचार में मेरी इसी साधना को है।

(साभार 'तपोभूमी')

मैं तो आर्यसमाज को जितनी धार्मिक संस्था समझता हूँ उतनी ही सांस्कृतिक संस्था भी समझता हूँ। उसकी सांस्कृतिक उपलब्धियाँ धार्मिक उपलब्धियों से कहीं अधिक प्रसिद्ध और रोशन हैं। आर्यसमाज ने सिद्ध कर दिया है कि समाज की सेवा ही किसी धर्म के सजीव होने का लक्षण है। सेवा का ऐसा कौन सा क्षेत्र है। जिसमें इसकी कीर्ति की ध्वजा न उड़ रही हो। हरिजनों के उद्धार में सबसे पहले आर्यसमाज ने कदम उठाया। लड़कियों की शिक्षा की जरूरत सबसे पहले इसने समझी, वर्ण व्यवस्था को जन्मगत न मानकर कर्मगत करने का सेहरा इसके सिर है। अन्ध विश्वास और धर्म के नाम पर किये जाने वाले हजारों अनाचारों की कब्र इसने खोदी। सामाजिक और बौद्धिक धरातल को आर्यसमाज ने जितना ऊँचा उठाया है, शायद ही भारत की किसी संस्था ने उठाया हो। **–मुंशी प्रेमचन्द**

रहस्य लम्बी जिन्दगी का!

– श्री नरेन्द्र

एक साधु बूढ़े हो गए थे। उनके जीवन के आखिरी क्षण आ पहुँचे। आखिरी क्षण में उन्होंने अपने शिष्यों को पास बुलाया। जब सब उनके पास आ गये, तब उन्होंने अपना पोपला मुँह खोल दिया और शिष्यों से बोले, 'देखो, मेरे मुँह में कितने दांत बच गए हैं।'

शिष्यों ने उनके मुँह की ओर देखा, कुछ टटोलते हुए वे लगभग एक स्वर में बोल उठे, 'महाराज, आपका तो एक भी दांत शेष नहीं बचा। शायद कई वर्षों से आपका एक भी दांत नहीं है।'

साधु बोल, 'देखो मेरी जीभ तो बची हुई हैं।'

सबने उत्तर दिया, 'हाँ आपकी जीभ तो अवश्य बची हुई है। पर यह सब कैसे हुआ?'

इस पर साधू ने कहा, 'मेरे जन्म के समय जीभ थी और आज मैं यह चोला छोड़ रहा हूँ तो भी यह जीभ बची हुई है। ये दाँत पीछे पैदा हुए, ये जीभ से पहले कैसे विदा हो गए, इसका क्या कारण है, कभी सोचा है?'

शिष्यों ने उत्तर दिया, 'हमें मालूम नहीं महाराज, आप ही बताइए।'

उस समय मृदु आवाज में सन्त ने समझाया, 'यही रहस्य बतलाने के लिए मैंने तुमको इस बेला में बुलाया है। इस जीभ में माधुर्य था, मृदुता थी और खुद भी कोमल थी इसलिए यह आज भी मेरे पास है, परन्तु मेरे दांतों में शुरु से ही कठोरता थी, इसलिए वे पीछे आकर भी खत्म हो गए, अपनी कठोरता के कारण ही ये दीर्घजीवी नहीं हो सके। दीर्घ–होना चाहते हो तो कठोरता छोड़ो और विनम्रता सीखो।'

●

शराब मनुष्य को पशु बना देती है

– रघुनाथप्रसाद पाठक

शराब के पीने से मनुष्य की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है और वह पशु बन जाता है। मनुष्य का विवेक नष्ट हो जाने से उसे बुराई और भलाई में भेद करना कठिन हो जाता है। शराब के नशे में पागल होना, अपने को जान बूझकर पागल बनाना होता है। शराबियों की दुर्दशा उस समय चरम सीमा को पहुँच जाती है। जब वे गन्दी नालियों में औंधा मुँह किए पड़े रहते हैं और कुत्ते उनका स्वागत करते हैं।

शराबखोरी से शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार की ही क्षति होती है। मन का संतुलन बिगड़ जाता और मानव पशु बन जाता है। यह मन की छुपी हुई बातों को खोल देती है। झगड़े टन्टे पैदा करती। मानव को उद्धत और खतरनाक बना देती है क्योंकि बुद्धि–हीन मनुष्य पशु समान होता है। शराबी के चेहरे से उसकी निकृष्ट आकृति से ही शराब के विरुद्ध सर्वोत्तम पाठ प्राप्त हो जाता है।

शराब हर प्रकार की बरबादी की जड़ है

शराबी माता पिता और अभिभावक अपने बच्चों के सामने बुरे उदाहरण उपस्थित करके उनके जीवन बरबाद कर देते हैं। इस बुरी लत के कारण अनेक धनी व्यक्ति अपनी सम्पत्ति का विनाश करके दर–दर के भिखारी बनते या अपनी पत्नियों बाल बच्चों और आश्रितों को भूख से, अत्याचार से, रोग से, कर्ज और अभाव से पीड़ित छोड़कर और कुल पर कलक लगाकर भरी जवानी में मृत्यु का ग्रास हो जाते हैं। बोतलों के बन्द पानी (शराब) में जितने आदमी डूबे होंगे उतने शायद अन्यत्र न डूबे हों। शराब के कारण बरबाद हुए घरों की ठीक तस्वीर देखनी हो तो उन घरों को देखा जो बिना किवाड़ों और खिड़कियों के खड़े हों उन बगीचों को देखो जो बिना चार दीवारी के बीरान पड़े हों।

●

ऋषि ने अपने देशवासियों तथा समस्त विश्व को सत्यार्थप्रकाश के रूप में जो अविनश्वर वसीयत दी है, वह उसकी प्रकाण्ड प्रतिभा का प्रतीक है। इस ग्रन्थ में वह हमारे सम्मुख एक उत्पादक, कलाकार, समीक्षक, संहारक तथा निर्माता के रूप में प्रकट हुआ है। – **श्री श्यामाप्रसाद मुखर्जी**

महाराणा उदयपुर को ऋषि दयानन्द का पत्र

श्रीयुत महिमहेन्द्र महामान्यार्यकुलदिवाकर आनन्दित रहो। श्रीमानों को विदित हो कि मैं जोधपुर में भाद्रपौर्णमासी तक रहना चाहता हूँ। पश्चात् कहाँ जाना होगा इस का निश्चय अब तक नहीं किया है। जब निश्चय हो जाएगा तब श्रीमानों को विदित कर दिया जाएगा।

महाराजे प्रतापसिंह जी और रावराजा तेजसिंह जी उदयपुर में श्रीमन्महोदयों को मिलने के लिए आने को कहते थे। अनुमान है कि पूने से वहीं आवेंगे। यदि आवें तो अच्छे प्रकार आप शिक्षा करेंगे। इस में कहना वा लिखना क्या है। किन्तु आर्यराजोत्कर्ष, वैदिकधर्म की उन्नति करने आदि का उपदेश यथायोग्य कीजियेगा। कुछ औषधि लिख के भेजी जाती है। इनको यथायोग्य उपयोग में लावें।

।। उपदेश ।।

1. कभी साहित्य जो नायका आदि भ्रष्ट रीति है उसका स्मरण श्रवण और वैसे गणेशपुरी से मनुष्यों का संग भी कभी मत कीजियेगा। और न मद्यपान न वेश्या का दर्शन नृत्यगान आदि प्रसंग करना।

2. जैसी दिनचर्या मैं लिख आया हूँ उससे विपरीत आचरण न कभी करना। किन्तु वही रात्रि के प्रातः 4 बजे उठना। दिन और रात में 10 बजे भोजन करना, दिन में निद्रा न लेनी और रात्रि में 10, 10½ साढ़े दश वा 11 बजे तक शयन सदा कीजियेगा।

3. सदा छः घण्टे तक समय राजकार्य में लगाया कीजियेगा। और जब कभी राजकार्य से अवकाश मिले तभी व्याकरणादि शास्त्र और मनुस्मृति के 3 अध्यायों का अभ्यास कीजियेगा। और व्यर्थ समय एक क्षणमात्र भी मत गमाइयेगा। जैसा कि सतरंज हास्य और विनोद आदि में मूर्ख लोग अपना अमूल्य समय खोते हैं–वैसा करना सर्वथा अनुचित है।

4. प्रातः समय योगाभ्यास की रीति से ध्यान करना। और नाम लेना आदि पुरोहित के आधीन कर दीजियेगा, जिस से ध्यान करने और राज्यपालन में समय यथोचित श्रीमानों को मिले। बुद्धि, बल, पराक्रम, आयु, प्रताप बढ़ता है।

5. निरामय महोत्सव में निम्नलिखित कार्य अदश्य कीजियेगा। एक वेदमन्त्रों से होम। दूसरा 1,25,000/– सवा लाख रुपये क्षत्रशाला और 25,000/– पच्चीस हजार रुपये स्वराज्य में अनाथ, वृद्ध, विधवा और रोगियों के पालन के लिए। और 10,000 रुपये मेवाड़ में वैदिक धर्म प्रचार और प्राचीन आर्षग्रंथों के छपवाने, प्रदान करने के लिये। और 2,00,000/– दो लाख वहाँ के क्षत्रिय सरदारों से लेकर क्षात्रशाला स्थापन शीघ्र कीजियेगा। इसमें ऐसा समझिये कि जानो एक बार गवर्नर जनरल साहेब और आये थे।

6. सदा बलवान् और राजपुरुषों से सताये हुओं की पुकार, यदि भोजन पर भी बैठे हों, तो भोजन को भी छोड़ के उनकी बात सुननी और यथोचित उनका न्याय करना। ऐसा न होवे कि निर्बल अनाथ लोग बलवान् और राजपुरुषों से पीड़ित हो के रुदन करें और उनका अश्रुपात भूमि पर गिरे कि जिससे सर्वनाश हो जावे। और इनकी रक्षा से सब प्रकार की उन्नति अर्थात् शरीरारोग्य, आयुवृद्धि, धनवृद्धि, राजवृद्धि और प्रतापवृद्धि को सदा करते रहिये।

7. अब परमात्मा की कृपा से महाशयों का शरीर निरामय हुआ है। अब इस को वीर्यरक्षणादि से सदा रोगरहित रखियेगा कि जिससे ऐहिक और पारमार्थिक सुख की सिद्धि करना सुगम होवे। और श्रीमानों के दीर्घायु होने से स्वराज्य और समस्त आर्यावर्त्त देश का सौभाग्य बढ़े।

8. कभी सत्य बात के करने और झूठ बात के छोड़ने में भय न करें किन्तु युक्तिपूर्वक इस बात को पूरी करें। और अपने राज्य में 25 वर्ष का पुरुष और 16 सोलह वर्ष की कन्या का विवाह करने के लिये दृढ़तापूर्वक आज्ञा दीजिये। कुमार और कुमारी का यह समय सनातन आर्ष ग्रन्थस्थ विद्याओं के ग्रहण करने में व्यतीत होवे जिससे सब मनुष्यजाति की सत्य उन्नति होवे।

9. एक विवाह से अधिक दूसरा भी विवाह कोई न करने पावे। परन्तु वह दोनों की प्रसन्नतापूर्वक होवे जिससे अत्युत्तम सन्तान उत्पन्न हों।

10. जो जितना अपराध करे उसी को उतना दण्ड और जो जितना अच्छा काम करे उसको उतना ही पारितोषिक देना अधिक वा न्यून नहीं चाहे माता पिता भी क्यों न हों।

12. जैसा कुत्तों पर अन्याय अर्थात् एक के हड़के होने

और अपराध करने में सब जाति को दण्ड देना अन्याय है, इसके लिए जितना धन व्यय इस प्रबन्ध में होता है उतने धन से जितनों से प्रबन्ध हो सके उतने पुरुष हड़के कुत्ते को मारने के लिये नौकर रखिये। वे रात दिन इसी कार्य करने में तत्पर रहें और बिना अपराधियों को दण्ड मत दिलाइये।

13. अब दशहरा निकट आया। उसमें अनपराधी भैंसे बकरों का प्राण न लेकर उस स्थान में सिरनी मिठाई मोहन-भोग लपसी आदि बलि प्रदान कीजिये। और क्षत्रियों को जो कि शस्त्र चलाना जानते हैं उन के उत्साह शौर्य धैर्य बल और पराक्रम की परीक्षा करने के लिये जंगली सुअरों को वा सिंह को प्रथम पकड़ा रख के उस दिन मैदान में छोड़ शस्त्रप्रहार करने की आज्ञा दीजिये। इनको विदित तो होवे कि शस्त्र चलाना ऐसा होता है।

14. आरोग्य और अधिक वर्षा होने के लिए वर्ष में 10,000 (दश हजार रुपये) घृतादि जिस रीति से होम हुआ था उसी रीति से प्रतिवर्ष होम कराइये। परन्तु उनमें से 5,000 (पांच हजार रुपये) के सुगन्धित घृत मोहनभोग का होम वर्षा ही में जिस दिन वर्षा का आरद्रा नक्षत्र लगे उस दिन से लेके विजय दशमी तक चारों वेदों के ब्राह्मणों का वरण करा एक सुपरीक्षित धार्मिक पुरुष उन पर रख के होम कराइयेगा।

सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा। और इस लेख को यथावत् सफल कीजियेगा। और इस का प्रत्युत्तर शीघ्र भिजवा दीजिये। किमधिकलेखेन महामान्यवर्यतमेषु।

15. अब कविराज जी आ गये होंगे। गोरक्षा के अर्थ अरजी शीघ्र देनी चाहिये। जितनी आशा लार्ड रिपन साहेब के ही समय में इस कार्य की सिद्धि होने की है उतनी दूसरे गवर्नर के समय में अनुमित नहीं है। इस कार्य की सिद्धि करने का यत्न शीघ्र होना चाहिए ऐसी सब आर्यवरों की सम्मति है तथा मेरी भी यही सम्मति है कि यह कार्य अब शीघ्र होना चाहिये, क्योंकि शुभ कार्य करने में विलम्ब होना उचित नहीं। जितनी शीघ्रता हो उतना ही अच्छा है।

(साभार : सार्वदेशिक विशेषांक)

Arya Public School

Near 100 Ft. Road, Sec.-55, Jeevan Nagar, Faridabad

The School : Neat & Clean Campus, Educated and dedicated Promotors, Transport Facility from nearby areas, Permanently recognised and affliated to Haryana Board, Special emphasis on Spoken English, Ultra modern teaching aids, including projectors, Library with all relevant material.

Director
Sanjay Arya
9212307856

Principal
Rajni Arya
9212307852

कौन है धनवान?

– स्वामी रामराज्यम्

एक फकीर था। हमेशा कहता था, ''मैं संसार का सबसे धनवान् मनुष्य हूँ–बड़े–बड़े सम्राटों से भी अधिक धनवान्।'' बच्चों को वह बहुत प्यार करता था। वह उन्हें कहानिया सुनाता था। बच्चे कहते, ''हमें तो तुम निर्धन दिखायी देते हो। देखो न, तुम्हारे कपड़े फटे रहते हैं। तुम हाथ में भोजन लेकर खाते हो। बर्तन भी नहीं हैं तुम्हारे पास। कुटिया तुम्हारी छोटी सी गुफा जैसी है। तुम कैसे धनवान हो।'' तब फकीर हंस कर कहता, ''फिर भी मैं धनवान हूँ, बहुत धनवान् हूँ।''

एक दिन उसने बच्चों को अपने बचपन की एक घटना सुनायी, यह बताने के लिये कि कैसे वह धनवान बन गया। उसने कहा, पुरानी बात है। मैं आठ–नौ वर्ष का बालक था। मेरे पिता एक साधारण नौकरी करते थे। उन्हें अधिक वेतन नहीं मिलता था।

होली का त्यौहार आया। मां गुझिया बनाने के लिये आटा गूंथने के लिए बैठी। थाली में थोड़ा सा ही आटा देखकर मैं पूछ बैठा, ''माँ, क्या थोड़ी सी ही गुंझिया बनाओगी?''

मां धीमी आवाज में बोलीए ''बेटा इस साल बहुत कठिनाई है। हर साल खर्च बढ़ता जाता है न?''

उस दिन मुझे पता चला कि हम लोग निर्धन हैं। मुझे दुःख हुआ, क्योंकि गुंझिया मुझे बहुत पसन्द थी। मां रसोई घर में गुंझिया बनाने लगी। तभी होली का ईनाम मांगने वाले भिखारियों के बच्चे दरवाजे पर खड़े हो गये। मां ने झांक कर देखा पांच बच्चे थे। मां ने पांच गुंझिया एक पैकेट में डालकर मुझसे उन्हें उन बच्चों को दे आने के लिए कहा। मैंने वैसा ही किया।

मैं बोला तो कुछ नहीं, परन्तु सोचता रहा, थोड़ी सी गुंझिया पांच पांच यों कम हो गयीं–मुझे खाने को कितनी मिल पायेंगी?

तभी दो बच्चे और आ गये और होली का ईनाम मांगने लगे। मां ने दो गुंझिया उन बच्चों को भी दे दीं।

मैं मां से बोला–मां, यह क्या? हम तो इन्हें जानते भी नहीं। तुम तो सारी गुंझिया इन्हीं को बांट दोगी।

मां के काम करते हुए हाथ रुक गये। बोली–''बेटा, शायद इन बच्चों को होली पर पकवान के नाम पर इन गुंझियों के अलावा और कुछ नहीं मिल पायेगा। कोई कुछ मांगे, और वह वस्तु अपने पास हो, तो देना ही चाहिए। हम लोग रुपये पैसे से निर्धन हैं, परन्तु हमें हृदय से धनवान होना चाहिए।''

उस दिन भिखारियों के बच्चों की कई टोलियां आयीं। मां ने सबको गुंझिया दीं–किसी को मना नहीं किया।

फिर माँ, पिता और मैं खाने के लिए बैठे। केवल तीन गुंझिया बची थीं। मैं बहुत दुःखी था। मां मेरा चेहरा देख रही थीं। उन्होंने अपने हिस्से की गुंझिया भी मुझे दे दी। फिर बोली, ''बेटा, तुम समझ रहे होगे कि हम लोग रुपये पैसे से निर्धन हैं। इस कारण होली के त्यौहार पर ये थोड़ी–सी गुंझिया खाने को मिल पायी हैं। निर्धन या धनवान होने का सम्बन्ध हृदय के संकीर्ण या विशाल होने से होता है। दूसरों के लिए हृदय को संकीर्ण बनाकर हम निर्धन हो जाते हैं–हमारे पास चाहे जितना रुपया–पैसा हो, तब भी हम निर्धन हो जाते हैं। यदि हृदय विशाल हो, तो हम बहुत धनवान बन जाते हैं –हमारे पास रुपया पैसा चाहे जितना कम हो।''

मां की इस बात को मैं कभी भूला नहीं। उस दिन से लेकर आज तक मेरा अपना सब कुछ दूसरों के ही लिये है। मेरे पास धोती और रोटी, दो के अतिरिक्त शायद ही कभी कोई वस्तु मिल पाये, परन्तु मैं संसार का सबसे धनवान व्यक्ति बन गया हूँ, क्योंकि मेरा हृदय बहुत विशाल है। उसमें सबके लिए स्थान है। सबके लिए प्रेम है।''

बच्चो फकीर की यह कहानी तुम्हें कैसी लगी? क्या इसे पढ़कर तुम अपने और दूसरों के निर्धन या धनवान होने के विषय में नये ढंग से सोचने लगे हो? फकीर की मां की तरह सोचना और करना। फिर बड़े–बड़े सम्राट भी तुम्हारी तुलना में निर्धन हो जायेंगे।

(साभार : जनज्ञान)

इस (सत्यार्थ प्रकाश) महान ग्रन्थ के अध्ययन से मेरी विचार–धारा ही बदल गई। सोई हुई जाति के स्वाभिमान को जागृत करने वाला यह ग्रन्थ अद्वितीय है। – **श्री हरदयाल** एम.ए., पीएच.डी.

महान् त्याग

– मुरारी लाल शर्मा

आभरण नर–देह का, बस एक पर–उपकार है।
हार को भूषण कहै, उस बुद्धि को धिक्कार है।।

– रामचरित उपाध्याय

बहुत समय बीता, इटली देश के एक धनाढ्य के केवल एक ही पुत्र था। माता–पिता की बड़ी उत्कट इच्छा थी कि उनका बेटा जज बने। इसी अभिप्राय से उन्होंने अपने प्यारे इकलौते पुत्र को इटली की राजधानी रोम में वकालत की परीक्षा पास करने के लिए भेज दिया।

परन्तु बैनडिक्ट नाम के उस लड़के के दिल को रोम नगर के आमोद–प्रमोदमय विलासपूर्ण जीवन को देखकर गहरा धक्का पहुँचा। वह ऐसे निकृष्ट जीवन से छुटकारा पाकर एकान्त में परमात्मा की पूजा करने की इच्छा से घने जंगल–पहाड़ों में चला गया। परन्तु उसकी बूढ़ी धाय ने, जो उससे बड़ा प्रेम करती थी, उसका साथ न छोड़ा।

वह बहुत दिन तक इसी प्रकार जंगली पहाड़ियों में रहता रहा। अंत में उसका मन इस जीवन से भी ऊब गया। कारण, उसे यह सहन न होता था कि वह बूढ़ी धाय उसके लिए भोजन लाए। अतः वह इन पहाड़ियों से भी भाग निकला।

इस बार वह बहुत ही दूर घने जंगल में निकल गया और पहाड़ की एक गुफा में रहने लगा। इस प्रकार रहते–रहते बहुत से वर्ष बीत गए।

जब लोगों ने सुना कि पहाड़ की गुफा में एक महात्मा रहता है तो वे उसके दर्शन को जाने लगे। साधुओं के एक दल पर तो बैनडिक्ट की शिक्षाओं का इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वे उस महात्मा से अपना गुरु बनने की प्रार्थना करने लगे। बहुत–कुछ वाद–विवाद के पश्चात् बैनडिक्ट इस पर राजी हो गये।

जब बैनडिक्ट ने देखा कि साधु लोग निठल्ला जीवन व्यतीत करते हैं, तो उसने उनके जीवन को संयमशील और उद्यमी बनाने का प्रयत्न किया। तब तो साधु लोग अपने किये पर पछताने लगे। उनका यह ढंग देख बैनडिक्ट फिर अपनी गुफा में लौट गया। वहाँ फिर बहुत–से साधु–महात्मा उसकी सत्संगति में निवास करने के लिए आने लगे। बैनडिक्ट ने भी उनके निवास के लिए आश्रम बनवा दिये। इन साधुओं का जीवन बड़ा ही उच्च रहता था। ये यथाशक्ति अपने जीवन में सरलता, पवित्रता, संयम तथा आज्ञापालन आदि उत्कृष्ट गुण लाने का प्रयत्न करते थे। इसके अतिरिक्त दिन में सात घंटे हाथ से काम करना इनके लिए अनिवार्य था।

एक रोज निर्धनों की सेवा–सुश्रूषा करने में महात्मा बैनडिक्ट को ज्वर हो गया। जिस सेवा के करने में उसके जीवन का एक–एक क्षण व्यतीत हुआ था, उसी सेवा करने में वह महात्मा परमगति को प्राप्त हो गया।

पाठक! कैसा अनोखा जीवन है इस त्यागी महापुरुष का! यदि ध्यानपूर्वक विचार किया जाये तो सब बातों का सार यही निकलता है–सेवा ही मीठा मेवा, भवसागर का खेवा है।

(साभार : गोदी भरे लाल)

आर्य वीर की पहचान

जो दुखियों की सेवा में तन मन लगाये,
जो बरबाद उजड़े घरों को बसाये,
जो औरों को सुख दे के खुद दुःख उठाये,
समझ लो वही आर्य वीर हो तुम।

जो अन्याय के आगे झुकना न जाने,
मुसीबत से डरकर जो छुपना न जाने,
जो तूफान आँधी में रुकना न जाने,
समझ लो वही आर्य वीर हो तुम।

जो मृत्यु का भय अपने मन में न लाये,
धधकती ज्वाला में जो कूद जाये,
चकित कर दे दुनिया को वह कर दिखाये,
समझ लो वही आर्य वीर हो तुम।

जो ब्रह्मचर्य से अपना बल थाम रक्खे,
जो पुरुषार्थ परमार्थ से काम रक्खे,
जो रोशन दयानन्द का नाम रक्खे,
समझ लो वही आर्य वीर हो तुम।

बलिष्ठ आत्मा

– रविचन्द्र गुप्ता

दियोसेसन कॉलेज, कोलकाता के महिला छात्रावास को चारों ओर से पुलिस ने घेरा हुआ है। छात्रावास में न कोई अन्दर जा सकता है और न कोई बाहर आ सकता है। छात्रावास के वार्डन भी मौके पर पहुँच चुके हैं। वार्डन और पुलिस के वार्तालाप को छात्रावास की एक छात्रा बड़े ध्यान से सुन रही है। बनलता दासगुप्त के कमरे की तलाशी की बात जब उसके कानों में पड़ती है तो वह चौंकती है लेकिन बिना एक पल भी खोए वह दौड़ कर बनलता के कमरे में पहुँचती है और उसे इसकी सूचना देती है ''दीदी! दीदी! तुम्हारे कमरे की तलाशी के लिये पुलिस आ रही है। तुम्हारे पास कुछ है तो मुझे दे दो।''

''क्या कहा? तलाशी....? हाँ, मेरे पास एक पिस्तौल है लेकिन वह तुम्हें सौंपकर मैं बच जाऊँ और तुम्हें फँसा दूँ, नहीं! नहीं! ऐसा नहीं हो सकता।''

ज्योतिकना दत्त घबराहट में दोनों हाथों से बनलता को झकझोरते हुए कहती है, ''दीदी, समय बहुत कम है। तलाशी केवल तुम्हारे कमरे की होनी है, मेरी नहीं। जल्दी करो, पिस्तौल मुझे दे दो। पुलिस पहुँचने ही वाली है।''

न चाहते हुए भी बनलता बक्से से रिवाल्वर निकाल कर ज्योतिकना को थमा देती है। ज्योति जैसे ही कमरे से बाहर निकलती है पुलिस भी पहुँच जाती है। पुलिस की तेज निगाहें सारी स्थिति को भाँप जाती हैं और ज्योतिकना से रिवाल्वर बरामद कर लिया जाता है। बनलता के कमरे की तलाशी में कुछ आपत्तिजनक साहित्य भी बरामद हो जाता है।

बनलता का जन्म विदगाँव, जिला ढाका (अब बंगला देश) में सन् 1916 ई. में हुआ था। बनलता दासगुप्त ने बचपन से ही भारत की आजादी हेतु क्रान्तिकारी गतिविधियों में भाग लेना आरम्भ कर दिया था। यतीन्द्रनाथ दास का 63 दिन की भूख हड़ताल के बाद जेल में ही निधन हो गया था। उनके शव को कलकत्ता लाया गया तो एक क्रान्तिवीर के शव को प्राप्त करने के लिये रेलवे स्टेशन पर 50 हजार से भी ज्यादा लोगों का अथाह सागर बनलता ने अपनी आँखों से देखा था। उसी से प्रभावित होकर बनलता के मन में भी देश के लिये मर-मिटने की ललक जाग उठी। यद्यपि उस समय उसकी आयु मात्र 13 वर्ष ही रही होगी लेकिन देशभक्ति के ज्वार को आयु की सीमा नहीं बाँध सकती। इसके बाद सन् 1930 में चटगाँव शस्त्रागार कांड एवं महिला क्रान्तिकारी प्रीतिलता वोद्दार द्वारा यूरोपियन क्लब पर आक्रमण और फिर आत्म-बलिदान आदि साहसिक घटनाओं ने उसे प्रेरणा प्रदान की। वह क्रान्तिकारी दल की सक्रिय सदस्या बन गई एवं गुप्त संदेश एवं हथियारों के आदान-प्रदान में सहयोग करने लगी।

छात्रावास में कमरे की तलाशी के बाद दोनों छात्राओं को गिरफ्तार कर लिया गया। बनलता दास गुप्त पर मुकदमा चलाए बिना ही उसे हिजली कैम्प जेल में बंद कर दिया गया। बनलता दासगुप्त ज्योतिकना दत्त की गिरफ्तारी से अत्यंत दुःखी थी। इस आघात को वह सह नहीं पा रही थी। सारा अपराध अपने ऊपर लेते हुए ज्योतिकना को निर्दोष होने का अदालत में बयान देना चाहती थी लेकिन उसे इसका अवसर ही नहीं दिया गया। इसी गम में बनलता को उदर-शूल की बीमारी लग गई। जेल के दूषित भोजन ने उसकी अंतड़ियों को बेकार कर दिया।

बनलता के पिता श्री हेमचन्द्र दासगुप्त ने कई बार प्रयत्न किया कि उनकी पुत्री के अदालत में बयान लिये जायें अथवा उसे रिहा किया जाए। उनकी कोई सुनवाई नहीं हुई। बनलता को हिजली जेल से प्रेसीडैंसी जेल कोलकाता में स्थानान्तरित कर दिया गया। यहाँ आकर बनलता को पता चला कि उसका रिवाल्वर ज्योतिकना दत्त के पास से बरामद होने के कारण उस निरपराध को चार वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई है। यह सुनकर बनलता अन्तर्वेदना से सिहर उठी। एक दिन जेल में मुलाकात के समय वह अपने पिता से बोली-''पिताजी! मुझे अपनी कैद की चिंता नहीं है। देश को गुलामी से मुक्त कराने के प्रयास में जो भी कष्ट झेलने होंगे मैं झेलूंगी। लेकिन मेरे कारण निरपराध ज्योतिकना को कष्ट झेलना पड़ रहा है। इससे मेरा मन बहुत आहत है। केवल इसी कारण में अन्दर ही अन्दर घुटन महसूस कर रही हूँ।

एक बार अदालत में बयान देने का अवसर मिल जाता तो मैं अपना अपराध कबूल कर लेती और ज्योतिकना को निर्दोष साबित कर देती। मेरी बीमारी का भी यही कारण है।''

पिता ने उसके मन की पीड़ा का अनुमान करते हुए उसे समझाया, ''बेटी! एक भक्त को मुसीबत से बचाते हुए यदि कोई स्वयं मुसीबत में फँस जाता है तो उस मुसीबत को भी वह व्यक्ति भगवान का प्रसाद समझ कर स्वीकार कर लेता है। इसी प्रकार ज्योतिकना ने भी देश की आजादी की खातिर कुछ बलिदान देना था सो उसने सहर्ष स्वीकार कर लिया है। मैं उससे स्वयं कई बार मिल चुका हूँ। चार वर्ष की सजा से वह अपने को गौरवान्वित अनुभव करती है।''

बनलता दास की बीमारी ने विकट रूप धारण कर लिया। सरकार द्वारा 'खतरनाक हालत' जान उसे रिहा तो कर दिया गया लेकिन उसके ही मकान में नजरबंद कर दिया। पिता हेमचन्द्र दासगुप्त ने इलाज कराने के लिये बनलता को बाहर ले जाने हेतु सरकार से कई बार प्रार्थना की लेकिन कुछ परिणाम नहीं निकला। कुछ दिनों बाद हेमचन्द्र दास को एक सरकारी पत्र मिला। इस पत्र की भाषा इस प्रकार थी, ''यदि बनलता दासगुप्त भविष्य में राजनैतिक गतिविधियों में भाग न लेने का आश्वासन दे दें तो उसे रिहा किया जा सकता है।'' पिता ने यह पत्र पढ़ा तो उन्हें लगा जैसे उनकी पुत्री को जीवन-दान मिल गया हो। उन्होंने खुशी-खुशी पत्र पुत्री को दिखाया। बनलता ने पत्र पढ़ा तो वह क्रोध में तमतमा उठी। वह पिता से बोली-

'सरकार समझती है कि अपनी बीमारी से मुक्ति पाने के लालच मे मैं धरती माँ की गुलामी का सौदा कर लूँगी। लेकिन शायद अंग्रेज यह नहीं जानता कि मैं शरीर नहीं हूँ। मैं वह बलिष्ठ आत्मा हूँ जो मरने के बाद पुनर्जन्म लेकर भी माँ की मुक्ति के लिये संघर्ष करती रहूँगी, लेकिन कभी भी गुलामी का सौदा नहीं करूँगी।''

बनलता जो कह रही थी हेमचन्द्र दास वह सब बड़े ध्यान से सुन रहे थे। उन्हें अपनी पुत्री में छिपे महान व्यक्तित्व का आज ही बोध हुआ। वह मन ही मन उसके आगे नतमस्तक थे। दो दिन बाद ही 1 जुलाई, 1936 ई. को मात्र बीस वर्ष की अल्पायु में बनलता दासगुप्त का शरीर पंचतत्व में विलीन हो गया। (साभार-बलि पथ की वीरांगनाओं से)

महर्षि दयानन्द सेवाधाम ट्रस्ट, सैक्टर 7, फरीदाबाद

सर्वे सन्तु निरामया:

प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र महर्षि दयानन्द सेवा धाम ट्रस्ट (पंजीकृत) आर्य समाज सैक्टर 7ए, फरीदाबाद (हरि.) चिकित्सालय में सभी प्रकार की बीमारियों का इलाज पंच तत्वों (मिट्टी, पानी, धूप, हवा, आकाश) के माध्यम से किया जाता है। किसी प्रकार की दवाई का प्रयोग नहीं किया जाता है।

आर्य समाज की प्रमुख गतिविधियों में से एक प्राकृतिक चिकित्सा लगभग दस वर्षों से निरन्तर ही समाज के लोगों को निरोगी करती चली आ रही है।

महिला तथा पुरुषों के इलाज की अलग-अलग व्यवस्था है। सक्षम तथा कुशल स्टाफ समाज की सेवा में कार्यरत हैं।

निराश न हों तथा जीर्ण रोगों के इलाज के लिए सम्पर्क करें।

नोट : साढे तीन वर्षीय एन.डी.डी.वाई. डिप्लोमा कोर्स के लिए सम्पर्क करें।

- चिकित्सा अधिकारी डा. विजेन्द्र सिंह (सागर जी), दूरभाष : 9210291284

आर्यसमाज क्या है? – प्रो. रतन सिंह

इसका उत्तर एक वाक्य में यह दिया जा सकता है–''सत्य पर आधारित एक सार्वभौम आर्यसंगठन का नाम आर्यसमाज है।''

इस वाक्य के दो भाग हैं। पहला भाग–आर्यसमाज सत्य पर आधारित है। दूसरा भाग–यह एक सार्वभौम संगठन है। संक्षेपतः इन पर विचार किया जाता है। यह सिद्ध है कि महर्षि दयानन्द को सत्य बहुत प्रिय था। पुष्टि में निम्न तथ्य प्रस्तुत है–

1. अपने प्रसिद्ध अमरग्रन्थ का नाम 'सत्यार्थप्रकाश'' अर्थात् सत्य–सत्य अर्थ का प्रकाश रक्खा है।

2. इसी ग्रन्थ के उत्तरार्द्ध की अनुभूमिका में वे लिखते हैं–''मेरा तात्पर्य किसी की हानि वा विरोध करने में नहीं, किन्तु सत्यासत्य का निर्णय करने–कराने का है।''

3. आर्यसमाज मुम्बई की स्थापना के अवसर पर राजकृष्ण महाराज ने महर्षि दयानन्द से कहा, 'नियमों में जीव–ब्रह्म के एकत्व के सिद्धान्त का समावेश होना चाहिए, पीछे से उसे छोड़ देंगे। ऐसा करने से हम अनेक लोगों को आर्यसमाज की ओर आकर्षित कर सकेंगे।'' इसके उत्तर में महर्षि ने कहा, ''मैं आर्यसमाज को असत्य पर कदापि स्थापत नहीं करूँगा।'' (क्योंकि सत्य उन्हें बहुत प्रिय था)

4. क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्यजाति की उन्नति का कारण नहीं है। – सत्यार्थप्रकाश भूमिका

5. सर्वसत्य का प्रचार कर, सबको ऐक्यमत में करा, द्वेष छुड़ा, परस्पर में दृढ़ प्रीतियुक्त कराके, सबसे सबको सुख–लाभ पहुँचाने के लिए मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है। – स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश

6. आर्यसमाज के दस नियमों में से प्रथम पाँच नियमों में प्रत्येक नियम में 'सत्य' शब्द का प्रयोग हुआ है।

दूसरे भाग में कहा गया है कि आर्यसमाज एक सार्वभौम आर्यसंगठन है। यह सत्य है कि आर्यसमाज किसी देश–विशेष या वर्ग–विशेष तक सीमित संगठन नहीं है। संसार का कोई भी व्यक्ति जो इसके मन्तव्यानुसार आचरण करना स्वीकार करता है, इसका सदस्य बन सकता है। इसकी पुष्टि में आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द के विचार प्रस्तुत हैं–

1. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है। – छठा नियम

2. ''यद्यपि मैं आर्यावर्त्त देश में उत्पन्न हुआ और बसता हूँ तथापि जैसे इस देश के मत–मतान्तरों की झूठी बातों को पक्षपात न कर, यथातथ्य प्रकाश करता हूँ, वैसे ही दूसरे देशस्थ वा मत वालों के साथ भी वर्त्तता हूँ।'' –सत्यार्थ भूमिका

3. ''मेरा कोई नवीन कल्पना वा मतमतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है, किन्तु जो सत्य है उसको मानना मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना और छुड़वाना मुझको अभीष्ट है। यदि मैं पक्षपात करता तो आर्यावर्त्त में प्रचलित मतों में से किसी एक मत का आग्रही होता।'' –स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश

4. (प्रश्न) तुम्हारा मत क्या है? (उत्तर) वेद अर्थात् जो–जो वेद में करने और छोड़ने की शिक्षा की है, उस–उस का हम यथावत् करना–छोड़ना मानते हैं। – सत्यार्थप्रकाश समु. 3

5. मुम्बई में आर्यसमाज की स्थापना के अवसर पर स्वामी जी ने अपने भाषण में कहा था, ''हमारा कोई स्वतन्त्र मत नहीं है। मैं तो वेद के अधीन हूँ।''

नियमों पर एक दृष्टि

कर्त्तव्यों को तीन वर्गों में विभाति किया जा सकता है–(1) स्व के प्रति कर्त्तव्य, (2) अन्यों के प्रति कर्त्तव्य, (3) ईश्वर के प्रति कर्त्तव्य। आर्यसमाज के दस नियमों में इन तीनों वर्गों में कर्त्तव्यों का संकेत मिलता है। प्रथम दो नियमों में ईश्वर के प्रति कर्त्तव्य का संकेत है। ईश्वर का स्वरूप बतलाकर उसी की उपासना करने की बात कही है। नियम संख्या 3, 4 और 5 में अपने प्रति कर्त्तव्यों का संकेत किया गया है। वे कर्त्तव्य हैं–वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना, सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग तथा सब काम धर्मानुसार करना। नियम संख्या 6, 7, 8 9 व 10 में अन्यों के प्रति कर्त्तव्यों को बतलाया गया है। वे कर्त्तव्य इस प्रकार है–(क) संसार का उपकार करना अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना। (ख) सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य वर्त्तना। (ग) अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करना। (घ)

अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहकर सबकी उन्नति करना और (ङ) सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना।

नियमों में वैदिक सिद्धान्त–आर्यसमाज का धर्म वेद है। वैदिक सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या महर्षि दयानन्दरचित ग्रन्थों में और उन सिद्धान्तों का संक्षेप 'स्वमन्तव्यामन्त–व्यप्रकाश' में दिया गया है और उसका भी सार आर्यसमाज के नियमों में है। जो निम्न प्रकार है–

वैदिक सिद्धान्त

1. ईश्वर की सत्ता, जगत् का आदिमूल निमित्तकारण, वेद अपौरुषेय हैं। –पहला नियम
2. अद्वैतवाद, अवतारवाद, अनेकेश्वरवाद, मूर्त्तिपूजा का खण्डन। – दूसरा नियम
3. परम धर्म का उपदेश, दैनिक–जीवन कैसे व्यतीत करना चाहिए। –तीसंरा, चौथा, पाँचवा नियम
4. आहार–विहार, वर्णाश्रम–व्यवस्था। –छठा नियम
5. यथायोग्य व्यवहार। –सातवाँ नियम
6. विद्या–अविद्या। –आठवाँ नियम
7. स्वार्थवाद, परार्थवाद, सामाजिक धर्म, स्वतन्त्रता व परतन्त्रता। –नवाँ, दसवाँ नियम

नियमों का क्रम – दर्शनशास्त्र की दो प्रमुख शाखाएँ हैं–तत्वज्ञान और प्राचारशास्त्र या नीतिशास्त्र। तत्त्वज्ञान के अन्तर्गत किसी पदार्थ के स्वरूप का वर्णन किया जाता है, अर्थात् जो पदार्थ जैसा होता है, उसको वैसा कहा जाता है और वाक्य के विधेय में 'है' का प्रयोग किया जाता है। प्राचारशास्त्र का सम्बन्ध आचरण से होता है और इसके विधेय में 'चाहिए' का प्रयोग किया जाता है। 'चाहिए', 'है' पर आश्रित रहता है। आर्यसमाज के प्रथम तीन नियम तत्त्वज्ञान व ज्ञान–मीमांसा–सम्बन्धी हैं। इनमें ईश्वर की सत्ता, उसका स्वरूप, जगत् और आत्मा की सत्यता इन सब तत्त्वज्ञान–सम्बन्धी और वेदोत्पत्ति ज्ञान–मीमांसा–सम्बन्धी विषयों का उल्लेख है। इनमें 'है' क्रिया का प्रयोग किया गया है। अन्तिम सात नियम प्राचार सम्बन्धी हैं और इनके विधेय में 'चाहिए' का प्रयोग किया गया है। इस तथ्य को यहाँ स्पष्ट किया जाता है।

अब देखिए कि प्रथम तीन नियमों के विधेय में 'है' का प्रयोग किया गया है।

पहला नियम – सब सत्य विद्या.... परमेश्वर है।
दूसरा नियम – ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप.... सृष्टिकर्ता है।
तीसरा नियम – वेद सब सत्य विद्याओं... परम धर्म है।

इसके बाद अगले सातों नियमों के विधेय में 'चाहिये' का प्रयोग है।

चौथा नियम – सत्य के ग्रहण करने .... रहना चाहिए।
पाँचवा नियम – सब काम धर्मानुसार ... करने चाहिए।
छठा नियम – संसार का उपकार .... उन्नति करना (चाहिए)।
सातवाँ नियम – सबसे प्रीतिपूर्वक.... वर्त्तना चाहिए।
आठवाँ नियम – अविद्या का नाश ..... करनी चाहिए।
नवाँ नियम – प्रत्येक को अपनी ही .... समझनी चाहिए।
दसवाँ नियम – सब मनुष्यों को ..... परतन्त्र रहना चाहिए तथा स्वतन्त्र रहना (चाहिए)।

इससे स्पष्ट है कि इन नियमों की रचना का क्रम बहुत तर्कपूर्ण है। इनके क्रम में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार इन नियमों के शब्दों में कोई भी व्यक्ति तथा आर्य प्रतिनिधि सभा (प्रान्तीय वा सार्वदेशिक) किसी भी प्रकार की काट–छाँट, परिशोधन व परिवर्धन नहीं कर सकती। महर्षि दयानन्द ने जिस रूप में इनका निर्माण किया है, वही रूप सदैव रहेगा।

आर्यसमाजों के साप्ताहिक सत्संग में शान्तिपाठ से पूर्व आर्यसमाज के नियमों का सम्मिलित पाठ किया जाता है। इसके अतिरिक्त अनेक आर्यशिक्षण–संस्थाओं में विद्यार्थियों को ये नियम कण्ठस्थ कराये जाते हैं। इस प्रकार आर्यजनों में इन नियमों का व्यापक प्रचार है। इन नियमों की भावना और सिद्धान्तों को सही प्रकार से समझ सकें, इस उद्देश्य से मैंने प्रस्तुत पुस्तक में नियमों की सरल विशेष व्याख्या करने का साहस किया है। अपनी अल्प बुद्धि के अनुसार मैंने जैसा समझा है, वैसा लिख दिया है।

आशा है स्वाध्यायशील आर्यजन इस प्रयास से लाभान्वित होंगे और त्रुटियों की ओर मेरा ध्यान दिलाने का कष्ट करेंगे।

(साभार : आर्य समाज के दस नियम)

रहिमन धागा प्रेम का

– प्रो. शामलाल कौशल

प्रसिद्ध सूफी साहित्यकार रहिमन का एक पद है:–

रहिमन धागा प्रेम का मत तोड़ो चटकाये।
जोरे से जुड़े नहीं, जुड़े तो गांठ पड़ जाये।

और बात भी सौ फीसदी सत्य है। प्रेम हमारे जीवन का आधार है।। प्रेम के कारण ही मनुष्य का जन्म होता है, प्रेम के कारण ही प्रेमी प्रेमिका का मिलन होता है, प्रेम ही पारिवारिक जीवन का आधार है। प्रेम के कारण सामाजिक रिश्तों का ताना–बाना बनता है। प्रेम के कारण ही भगत और भगवान में निकटता आती है। अगर प्रेम ना हो तो दुनिया का अस्तित्व ही खत्म हो जाये। किसी का धन सम्पत्ति से प्रेम होता है, कोई सत्ता प्राप्ति का मतवाला होता है। किसी को शोहरत की भूख होती है तो कोई समाज सेवा के प्रेम में रंगा होता है। किसी को आत्म प्रशंसा से प्रेम होता है, कोई चापलूसी को ही प्रेम समझता है। किसी को खाने, पीने, पहनने, घूमने–फिरने का प्रेम होता है। ऐसे व्यक्ति का मिलना कठिन है जो 'प्रेम दीवाना' ना हो। जब हम सबके लिए प्रेम इतना महत्वपूर्ण है तो रहिमन ने फरमाया है कि प्रेम के धागे को कभी नहीं तोड़ना चाहिए। क्योंकि एक प्रेम का धागा टूट जाये तो फिर पहले ही तरह नहीं हो सकता और टूटे हुए धागों को जोड़ा जाये तो बीच में गांठ पड़ जाती है। अगर दो मित्रों में किसी बात को लेकर झगड़ा हो जाये, उनमें फूट पड़ जाये तो सालों की दोस्ती देखते–देखते दुश्मनी में बदल जाती है। वे एक दूसरे की जान के दुश्मन बन जाते हैं। मामला कोर्ट कचहरी तक पहुँच जाता है। वे एक दूसरे को तबाह करने पर उतारू हो जाते हैं। अगर कोई भला आदमी उन दोनों मित्रों में सुलह–सफाई करके मित्रता भी क्यों ना करा दे, उनके दिलों में पड़ी दरार कभी नहीं भरती। उनका आपसी प्रेम–प्यार, विश्वास, निर्भरता, एक दूसरे पर मर मिटने की भावना पहले की तरह कभी नहीं बनती। अत: प्रेम बंधन टूटना दोनों पक्षों के लिए घाटे का सौदा है। आज हमारे परिवारों में जो कलह–कलेश, स्वार्थ, ईर्ष्या, संदेह, मारपीट, एक दूसरे को धोखा देना, तलाक, एक दूसरे से बाते छुपाना, अकेलेपन की प्रवृत्ति पाई जाती है उसका मुख्य कारण आपस में प्रेम का ना होना या प्रेम के धागों में गांठ पड़ा ही समझना चाहिये।

समाज के विभिन्न समुदाय जैसे हिन्दू, सिख, मुस्लिम, जैन, बौद्ध आदि का आपसी सम्मान, एक दूसरे पर मर मिटना तथा एक दूसरे के त्योहारों को प्रेमपूर्वक तथा श्रद्धापूर्वक मनाना देश के लिये गर्व की बात है। तभी तो भारत में अनेकता में एकता की मिसाल दी जाती है। लेकिन कभी–कभी विभिन्न समुदायों में आपसी कलह, कलेश तथा अविश्वास के कारण सामुदायिक दंगे भड़क जाते हैं। 'मज़हब नहीं सिखाता आपस में वैर रखना' के बावजूद भी मज़हबी तकरार हो जाते हैं। बलात्कार, आगज़नी, लूटमार आदि की वारदातें हो जाती हैं। विभिन्न समुदायों में आपसी विश्वास को धक्का लगता है। 1947 में भारत विभाजन के कारण जो हिन्दुओं तथा मुसलमानों में फसाद हुए उसे याद करके अभी तक उससे प्रभावित जीवित लोगों की कंपकपी छूट जाती है। क्या उसी समय बंगाल के दंगों को भूला जा सकता है? आज़ादी के बाद हुए गुजरात के दंगे तथा उत्तर प्रदेश के मुज़फ्फरनगर के सामुदायिक दंगों का कारण भी आपसी विश्वास का टूटना ही है। ऐसे में अविश्वास की भावना लोगों को एक दूसरे के नज़दीक नहीं आने देती जो कि देश की अखण्डता तथा एकता के लिये खतरनाक है। देश को क्षेत्रीय, जातीय या सामुदायिक नेताओं की नहीं बल्कि राष्ट्रीय नेताओं की जरूरत है, जो धर्मनिरपेक्षता के आधर पर सभी समुदायों के लोगों को इकट्ठा रख सकें। कहना ना होगा कि जब तक विभिन्न समुदायों तथा राजनीतिक दलों में आपसी सहयोग, विश्वास, समन्वय तथा समझ होती है, जिसका आधार जनकल्याण, देशभक्ति तथा सुरक्षा होती है, राजनीतिक स्थिरता बनी रहती है। लेकिन जब राजनीतिक अविश्वास, फूट, संदेह, स्वार्थ बढ़ जाता है तब देश का राजनीतिक ताना बाना टूटने लग जाता है। सरकारें टूट जाती है। इन सबका समाधान प्रेम (समय, सहयोग), बंधन को बनाकर रखना है। अन्यथा प्रेम के धागों के टूटने का परिणाम तो खतरनाक ही होगा। ●

स्वामी दयानन्द के सिद्धान्त उनके सत्यार्थ प्रकाश में निहित हैं। यही सिद्धान्त ऋग्वेदादिभाष्य–भूमिका में हैं। स्वामी दयानन्द एक धार्मिक सुधारक थे। उन्होंने मूर्तिपूजा से अविराम युद्ध किया। – **सर वेलण्टाइन चिरौल**

आर्यसमाज का आठवाँ नियम

''अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।''

आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य संसार का उपकार करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति का एक साधन छठे नियम में बतलाकर दूसरे साधन का विधान इस आठवें नियम में किया गया है। इस नियम के दो भाग हैं—1. अविद्या का नाश और 2. विद्या की वृद्धि। प्रत्येक शास्त्र में उसके विषय के अनुसार विद्या और अविद्या के अनेक लक्षणादि वर्णन किये गये हैं। विस्तार भय से उन सबका यहाँ वर्णन करना सम्भव नहीं है, चूँकि आर्यसमाज के नियमों की रचना महर्षि दयानन्द ने की है, इसलिए उनके ग्रन्थों में विद्या—अविद्या के स्वरूपादि का जैसा वर्णन किया गया है, उसी पर विचार करना समीचीन होगा।

महर्षि रचित व्यवहारभानुनामक लघु पुस्तिका में यह वर्णन आता है—

प्रश्न—''विद्या और अविद्या किसको कहते हैं?''

उत्तर—''जिससे पदार्थ का स्वरूप यथावत् जानकर उससे उपकार लेके अपने और दूसरों के लिए सब सुखों को सिद्ध कर सकें, वह 'विद्या' और जिससे पदार्थों के स्वरूप को उलटा जानकर अपना और पराया अनुपकार कर लेवें, वह 'अविद्या' कहाती है।''

जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा जानना 'विद्या' और विपरीत जानना अविद्या है, रज्जु को रज्जु जानना विद्या और उसे सर्प समझना अविद्या है। यह परिभाषा सर्वग्राह्य है। इसमें किसी प्रकार का मतभेद होने का स्थान नहीं है। वैशेषिक दर्शन 9/2/11—12 में इस प्रकार कहा है—तद् दुष्टं ज्ञानम्। यह अविद्या (दुष्टज्ञानम्) दोषपूर्ण ज्ञान है। सूत्र का तात्पर्य यह है—जो वस्तु जैसी नहीं हैं, उसका वैसा दीखना अविद्या है। अगला सूत्र इस प्रकार है—''अदुष्टं विद्या'', अर्थात् जो ज्ञान (अदुष्टम्) दोषपूर्ण नहीं है। अविद्या से विपरीत होने के कारण विद्या का स्वरूप होगा—जो पदार्थ जैसा है, उसको वैसा ही जानना।

विद्या की यह परिभाषा बहुत सरल है, परन्तु व्यवहार में हम अनेक बार धोखा खा जाते हैं। दुष्ट व्यक्ति को सज्जन समझ लेते हैं और सादी वेशभूषा में रहने वाले सरल प्रकृति के चरित्रवान् व्यक्ति को मूर्ख समझ जाते हैं। यदि दार्शनिक दृष्टि से विचार किया जाए तो हम अनित्य जगत् को नित्य और शरीरधारी साकार पुरुष को ईश्वर समझ लेते हैं, जो वस्तुतः निराकार और सर्वदेशी है। इसलिए प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि विद्या के वास्तविक स्वरूप को कैसे जाने? इस बारे में महर्षि दयानन्द 'व्यवहारभानु' में लिखते हैं—

प्रश्न—विद्या किस—किस प्रकार और किन कर्मों से होती है?

उत्तर—**चतुर्भिः प्रकारैर्विद्योपयुक्ता भवति।**

आगमकालेन स्वाध्यायकालेन प्रवचनकालेन व्यवहारकालेनेति।। —महा.अ. 1/1/1; आ. 1

विद्या चार प्रकार से आती है—आगम, स्वाध्याय, प्रवचन और व्यवहारकाल.... तथा अन्य भी चार कर्म विद्या प्राप्ति के लिए हैं—श्रवण, मनन, निदिध्यासन और साक्षात्कार। इन आठों की परिभाषा यहाँ देना सम्भव न हो सकेगा। इसके लिए मूल पुस्तक को ही देखना लाभकारी होगा।

महर्षि दयानन्द ने विद्या के बारे में जो लिखा है, उसके दो भाग हैं—1. विद्या का स्वरूप और 2. उस स्वरूप को जानकर उससे उपकार लेके अपने और दूसरों के लिए सुखों को सिद्ध करना। विद्या का केवल सैद्धान्तिक ज्ञान पर्याप्त नहीं है। नारद ने सनत्कुमार ऋषि के पास जाकर कहा—''भगवान! मुझे उपदेश दीजिए।'' सनत्कुमार ने कहा—''जितना तुमने पढ़ा है, उतना बताओ, जिससे आगे मैं तुम्हें बताऊँ।'' नारद ने उत्तर दिया—''मैंने ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद पढ़ा है, इनके सिवा इतिहास, पुराणरूप पाँचवा वेद, वेदों का व्याकरण, पितृ—विद्या, गणित, दैव—विद्या, अर्थशास्त्र, तर्कशास्त्र, भूत—विद्या, क्षत्र—विद्या, नक्षत्र—विद्या, सर्प—विद्या और नृत्य, संगीत आदि भी जानता हूँ। यह सब तो मैं जानता हूँ, परन्तु मैं मन्त्रवित् हूँ, आत्मवित् नहीं,'' अर्थात् मैंने पुस्तकें तो रट ली हैं, परन्तु मुझे आत्मशान्ति नहीं मिली। इसी प्रकार संसार में पदार्थों का सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त कर लेने वाले विद्वान् तो बहुत भरे पड़े हैं, परन्तु उन्हें आत्मिक शान्ति नहीं है, इसलिए विद्या की उक्त परिभाषा के दूसरे भाग में कहा गया है कि उस विद्या से मनुष्य को अपनी भलाई करनी चाहिए और साथ ही दूसरों का भी उपकार

करना चाहिए। यहाँ विद्या के आचरण–पक्ष पर बल दिया गया है।

विद्या की प्राप्ति से पूर्व अविद्या का नाश करना आवश्यक है। दुरितों के दूर होने के बाद ही भद्र की प्राप्ति होती है। वस्त्र से मैल निकालने के बाद ही नील की रौनक आती है। इसलिए प्रस्तुत नियम में पहले अविद्या को दूर करने की बात कही गई है। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश नवमसमुल्लास मे योगदर्शन के सूत्र के आधार पर अविद्या के चार भाग किये हैं। प्रथम भाग है–अनित्य संसार को नित्य समझना। अपवित्र को पवित्र समझना, दूसरा भाग–दुःख को सुख समझना, तीसरा–अनात्मा में आत्मबुद्धि करना और चौथा भाग है। सब प्रकार की अविद्या का कारण सत्योपदेश का अभाव है। सत्यार्थप्रकाश, एकादश समुल्लास में लिखा है– जब सच्चा उपदेश न रहा तब आर्यावर्त्त में अविद्या फैलकर परस्पर में लड़ने–झगड़ने लगे, क्यों कि **उपदेश्योपदेष्ट्रत्वात् तत्सिद्धिः। इतरथान्धपरम्परा,** अर्थात् जब उत्तम–उत्तम उपदेशक होते हैं, तब अच्छे प्रकार धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सिद्ध होते हैं और जब उत्तम उपदेशक और श्रोता नहीं रहते, तब अन्ध–परम्परा बढ़ती है। फिर भी जब सत्पुरुष उत्पन्न होकर सत्योपदेश करते हैं, तभी अन्ध–परम्परा नष्ट होकर प्रकाश की परम्परा चलती है।'' इस नियम का सही–सही पालन करने के लिए आर्यसमाजों, आर्यप्रतिनिधि प्रान्तीय सभाओं और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को योग्य आर्यपुरोहित, भजनोपदेशक और उपदेशकों की व्यवस्था करनी चाहिए। उपदेशकों को अपना और अपने परिवार का भरण–पोषण करने के लिए प्रचुर मात्रा में वेतन–दक्षिणा दी जाए। समाज में उनको सम्मान का स्थान प्राप्त हो। आर्यसमाज की वेदि से वैदिक–सिद्धान्तों सम्बन्धी तुलनात्मक व्याख्यान दिए जाएँ। समय–समय पर आर्यविद्वानों, विचारकों और शुभचिन्तकों की गोष्ठियाँ आयोजित की जाएँ, जिनमें प्रचार के प्रकार और समस्याओं पर गम्भीरता से विचार किया जाए।

आठवें नियम के उत्तरार्द्ध में विद्या की वृद्धि (केवल प्राप्ति नहीं) करने का आदेश है। वह कैसे हो? जैसा कि नियम के पूर्वार्द्ध में कहा है–आर्यों को सर्वप्रथम अविद्या का नाश करना चाहिए। उसके बाद विद्या–प्राप्ति की इच्छा करें। पुरुषार्थ से प्राप्त विद्या की यथावत् रक्षा और रक्षित की वृद्धि और बढ़ी हुई विद्या से संसार का उपकार करना। ●

''आर्य भारत में बाहर से आये'' : यह मान्यता देशद्रोह है

लोकसभा में संविधान दिवस के प्रसंग में बहस करते हुए मल्लिकार्जुन खडगे ने कहा–आर्यों ने भारत पर आक्रमण करके हम लोगों को दलित और शोषित बनाया। हम आपके अत्याचारों को पिछले पाँच हजार वर्षों से सह रहे हैं। हम आपका मुकाबला करते रहेंगे। खडगे ने भाजपा को बाहर से आकर इस देश पर राज्य करने वाली पार्टी बताया। इस बात की गम्भीरता को आर्यसमाज के अतिरिक्त कोई नहीं समझ सकता। संसद सदस्य स्वामी सुमेधानन्द बधाई के पात्र हैं, जिन्होंने खडगे के वक्तव्य का लिखित में विरोध किया और कार्यवाही से निकलवा दिया। हमें खडगे को भी धन्यवाद देना चाहिए, जिन्होंने इस देशद्रोही विचार की गम्भीरता को संसद में अपने वक्तव्य के माध्यम से प्रकाशित किया।

बहुत वर्ष पूर्व भी एंग्लो इण्डियन राज्यसभा सदस्य ने इस प्रकार का प्रश्न उठाया था, परन्तु उस समय किसी ने इस विचार की घातकता को समझा नहीं था। उस समय मान्य सदस्य ने सदन में कहा था–भारतीयों को अंग्रेजी भाषा से द्वेष नहीं करना चाहिए, क्योंकि संस्कृत भी भारतीयों के लिये विदेशी भाषा है। यह भारत में बाहर से आये आर्यों की भाषा है। जब इस देश के लोग संस्कृत से प्रेम करते हैं, तो फिर विदेशी भाषा के नाम पर अंग्रेजी से द्वेष क्यों करते हैं? आर्यों का भारत में बाहर से आकर बसने का विचार अंग्रेजों के मस्तिष्क की उपज है। भारत पर आक्रमण मुसलमानों ने भी किया और देश को पराधीन भी किया था। उन्होंने यहाँ की सभ्यता, संस्कृति को बलपूर्वक नष्ट करने का प्रयत्न किया। अंग्रेजों ने इस देश को दास बनाया और यहाँ की सभ्यता, संस्कृति को बुद्धिपूर्वक नष्ट करने की योजना बनाकर कार्य किया। मल्लिकार्जुन खडगे इस षड्यन्त्र के शिकार बने हैं।

अंग्रेज आज भी इस देश को खण्डित करने के प्रयासों में लगे हैं। प्रमुख रूप से इस्लाम और ईसाइयों के माध्यम से धर्म परिवर्तन द्वारा तथा दूसरे रूप से माओवादी हिंसा फैलाकर देश में अराजकता उत्पन्न करने के प्रयासों द्वारा व्यापार व आधुनिकता के नाम पर समाज में नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों

के नाश करने के उपायों द्वारा तथा भारत में आर्य–द्रविड़ संघर्ष के काल्पनिक सिद्धान्त का उपयोग कर पाश्चात्य यूरोप अमेरिका की शक्तियाँ चर्च एवं व्यापार द्वारा हिंसा, असन्तोष फैलाकर फिर से ईसाइस्तान, इस्लामिस्तान, द्रविड़स्तान तथा माओवाद के नाम से नक्सलियों के राज्य के रूप में इस देश के विभाजन का प्रयास अपनी पूरी शक्ति से करने में लगे हुए हैं। अन्य प्रयासों की चर्चा का प्रसंग यहाँ नहीं है। जहाँ तक खडगे का प्रश्न है, इसे तो स्वतन्त्रता के साथ ही समाप्त किया जाना चाहिए था, परन्तु गत साठ वर्ष के शासन ने खडगे की पार्टी का ही समर्थन किया, जो भारतीय परम्पराओं का, संस्कृति का और भाषा का नाश करने को ही देश की प्रगति का मूल मन्त्र समझती थी। इनकी दृष्टि में अंग्रेज और अंग्रेजी ही प्रगति के पर्याय हैं। परिणामस्वरूप हमारे शासन में आदिवासी जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है। आदिवासी शब्द का प्रयोग करना, अपने आपको बाहर से आया स्वीकार करना। इन शब्दों के अर्थों को हमने आज तक समझा नहीं, इसी कारण अपनी रक्षा में इस मिथ्या मान्यता को स्थान दिया हुआ है। हमारे बच्चे आज भी यही पढ़ते हैं कि इस देश में आर्य बाहर से आये और यहाँ के मूल निवासी द्रविड़ लोगों को पराजित कर दक्षिण मे भगा दिया और अपना शासन स्थापित किया। इस मिथ्या मान्यता को इतना प्रचारित किया गया कि भारतीय संसद में कांग्रेस के नेता खडगे इस मान्यता के प्रवक्ता बन खड़े होने मेंअपना गौरव समझने लगे, अपने आपको द्रविड़ मूल और आर्य से भिन्न अनार्य मनाने लगे।

आज हमारे लिये एक अवसर आया है, जिसका लाभ उठाकर हमें अपनी शिक्षा से इस मान्यता को बहिष्कृत कर देना चाहिए तथा प्रशासन शब्दावली से आदिवासी जैसे शब्दों का प्रयोग निषिद्ध कर देना चाहिए। खडगे यदि आर्यों से भिन्न होते तो उनका नाम मल्लिकार्जुन नहीं होता। यदि खडगे भाजपा को विदेशी मानते हैं, तो वे श्रीमती सोनिया गाँधी को क्या कहेंगे, जिसके वे सेनापति बने हुए हैं? खडगे जी इस देश के नागरिक हैं, अपने देश से निश्चय ही प्रेम होगा, तो उन्हें इस आर्य–अनार्य सिद्धान्त और षड्यन्त्र को समझना चाहिए।

प्रथम बात किसी के लिये भी जानने की यह है कि आर्य–अनार्य शब्द जातिवाचक नहीं, गुणवाचक हैं, क्योंकि कृण्वन्तो विश्वमार्यम् कहते हुए वेद कहता है–सम्पूर्ण रूप से आर्य बनो और सब को आर्य बनाओ। जब सबको आर्य बनाया जायेगा, तब खडगे जी अनार्य कैसे रह पायेंगे? आर्य–अनार्य शब्द अच्छे और बुरे के अर्थ में है। मनु कहते हैं–इस देश में आर्य और दस्यु अर्थात् अनार्य रहते हैं, क्या खडगे जी अपने को चोर, डाकू कहलाना पसन्द करेंगे? क्या चोर, डाकू, लूटेरों की कोई जाति होती है? क्या इनके लिये संविधान, कानून, पुलिस, होती है? फिर ऐसी निरर्थक विचारधारा के लिये खडगे जी अपने को उनका प्रतिनिधि कैसे कह सकते हैं? भारतीय संस्कृति, साहित्य, परम्परा से आर्य वे हैं, जो लोग श्रेष्ठ परम्परा के धनी है। वेद और वैदिक धर्म स्वीकार करते हैं, वे सभी आर्य है। कोई भी आर्य बन सकता है, किसी को आर्य कह सकते हैं। हमारी आर्य परम्परा में एक पत्नी अपने पति को आर्य–पुत्र कहकर पुकारती है। पाश्चात्य लोगों ने आर्य–अनार्य सिद्धान्त की कपोल कल्पना की, जिसका उद्देश्य भारतीय समाज में विभाजन उत्पन्न करना था। आर्य–अनार्य का विचार, आर्य भारत में बाहर से आये हैं–यह सिद्धान्त विद्वानों, वैज्ञानिकों की दृष्टि में खण्डित हो चुका है, परन्तु यूरोप–अमेरिकी पक्ष इसका पूरा उपयोग इस देश को बाटने में करने में लगा हुआ है। इस षड्यन्त्र को सबसे पहले ऋषि दयानन्द ने समझा था और उन्होंने अपने ग्रन्थों में इस सिद्धान्त का स्पष्ट रूप से खण्डन किया था। ऋषि दयानन्द ने लिखा–आर्यों का बाहर से भारत में आने का, भारतीय साहित्य के किसी भी ग्रन्थ में उल्लेख नहीं मिलता। यदि आर्य बाहर से आकर भारत में बसे होते तो इतने बड़े ऐतिहासिक सन्दर्भ का उल्लेख उनके साहित्य में न हो, यह असम्भव है। किसी देश से आकर बसने की घटना उस समाज में निरन्तर स्मरण की जाती है। आज कोई पाकिस्तान से उजड़कर आया, कोई आक्रमणकारी के रूप में आया, दोनों का इतिहास मिलता है। समाज में कथायें मिलती हैं, परम्परायें मिलती हैं, पुराने रीति–रिवाज, जीवन शैली के अंश मिलते हैं, क्या आर्यों की कोई परम्परा किसी तथाकथित मध्य एशिया या किसी अन्य देश में मिलती है? क्या आर्यों की भाषा मौलिक रूप से किसी दूसरे देश में बोली जाती है या इतिहास में पाई जाती है? इतना ही नहीं, बड़ी जाति का संक्रमण एक दिन में तो नहीं हो सकता, उसके उस स्थान से चलकर यहाँ तक पहुँचने के मार्ग में उनके चिह्न, अवशेष तो मिलने चाहिए। यदि बाहर से चलकर भारत को आर्यों ने जीता था, तो क्या बीच के देश उन्होंने बिना जीते ही छोड़ दिये थे? यदि जीते थे तो आज वहाँ उनका अस्तित्व क्यों नहीं है, वहाँ उनका राज्य क्यों नहीं है? आर्यों के इतिहास, संस्कृति के अवशेष वहाँ क्यों नहीं पाये जाते?

ऋषि दयानन्द कहते हैं—भारतवर्ष में सबसे पहले आकर निवास करने वाले आर्य ही है। शास्त्रों की, ऋषि दयानन्द की मान्यता है कि जब इस पृथ्वी का निर्माण हुआ, सम्पूर्ण जलमय ससार में से पृथ्वी का जो भाग सबसे पहले जल से बाहर निकला, वह तिब्बत था तथा सबसे ऊँचा होने के कारण उसी भाग पर मनुष्यों की सृष्टि सबसे पहले हुई। जो मनुष्य वहाँ से उतरकर सबसे पहले भारत आये और जिन्होंने इस देश को बसाया, वे ही लोग आर्य कहलाये। शेष संसार में यहीं से लोगों का जाना हुआ है। बाहर से इस देश में आने की बात मनगढ़न्त, मिथ्या और षड्यन्त्रपूर्ण है। विश्व साहित्य में आर्यों का बाहर भारत में आना लिखा नहीं मिलता, हाँ विश्व के अनेक ग्रन्थों में जिनका पुराना इतिहास मिलता है, उनमें उनके पूर्वजों का भारत से आकर वहाँ निवास करना लिखा मिलता है। ईरान के इतिहास और धर्म ग्रन्थ जिन्द अवेस्ता में उनके पूर्वजों का भारत से जाकर ईरान में वास करने का उल्लेख मिलता है। जब कोई देश जाति किसी पर विजय प्राप्त करती है तो वह अपने उल्लास और हर्ष को प्रकाशित करने के लिये अनेक प्रकार के आयोजन करती है, उसे स्थायी बनाने के लिये इतिहास लिखती है। शिलालेख, ताम्र लेख, स्तूप, स्तम्भ, भवन, स्मारक बनाये जाते है, परन्तु पूरे भारत में इस प्रकार का कोई उल्लेख नहीं मिलता, कोई चिह्न भी नहीं मिलता। इससे पता लगता है कि यह एक कपोल-कल्पना है, जो एक षड्यन्त्र के माध्यम से की गई है। इसके विपरीत ब्राह्मण ग्रन्थ, मनुस्मृति आदि प्राचीन ग्रन्थों में आर्यों के तिब्बत से भारत में आने, अनेक युद्ध जीतने आदि का विवरण मिलता है, परन्तु मध्य एशिया या किसी अन्य देश से भारत में आकर बसने का, यहाँ के मूल निवासियों को निकाल कर उनका राज्य छीनने का कोई उल्लेख प्राचीन भारतीय शास्त्रों, साहित्य या इतिहास के ग्रन्थों में नहीं मिलता, अतः आर्यों द्वारा द्रविड़ों पर आक्रमण की कल्पना मिथ्या षड्यन्त्र मात्र है।

जिन्हें हम द्रविड़, दलित, शूद्र मान रहे हैं, वे किस अर्थ में आर्यों से भिन्न हैं? भारतीय हिन्दू समाज के सवर्ण-असवर्ण दोनों ही अंग है। दोनों के गोत्र एक से हैं; परम्परायें, खान-पान, वस्त्र, आभूषण, पहनावा-सभी कुछ एक जैसा है। सभी के देवी-देवता, धर्मग्रन्थ, उपास्य, उपासना पद्धति-सब एक जैसे है। सभी राम, हनुमान, शिव, गणेश आदि की पूजा-उपासना करते हैं। व्रत, उपवास, संस्कार सभी कुछ पूरे समाजको एक दूसरे से मिलता है। सम्पन्नता-निर्धनता के आधार पर सभी में परस्पर स्वामी-सेवक सम्बन्ध पाया जाता है, अतः समग्र रूप में समाज एक है। यदि कोई अन्तर है तो विद्या या अविद्या का, सम्पन्नता या निर्धनता का, अन्याय या न्याय का अन्तर और परिणाम देखने में आता है। यह सभी समाजों में स्वाभाविक रूप से देखा जा सकता है। इसका मूल कारण भारतीय समाज का जन्मना जाति स्वीकार करने का दुष्परिणाम है। यह अज्ञान, अविद्या, पाखण्ड, शोषण, सवर्ण-असवर्ण, जन्मना जाति, ऊँच-नीच, छुआछूत के परिणामस्वरूप, जिसका पाश्चात्य लोग लाभ उठाकर समाज में विरोध और द्वेष उत्पन्न करने का प्रयास कर रहे हैं। अंग्रेजों ने पं. भगवद्दत्त के पास भी अपना सन्देश वाहक भेजा था—वे अपनी पुस्तकों में लिख दें कि जाट लोग इस देश में बाहर से आर्य के रूप में आये है, परन्तु पण्डित जी ने दृढ़ता से इसका निषेध कर दिया। जहाँ आर्य विद्वानों ने निषेध किया, वहीं पर धन व प्रतिष्ठा के लोभी लोगों ने अंग्रेजों की इच्छानुसार लेखन भी किया।

इस षड्यन्त्र को ऋषि दयानन्द ने समझा था और इसका सप्रमाण प्रतिकार भी किया था। सामान्य रूप से आर्यावर्त्त की सीमा मनु के श्लोक 'आसमुद्रात्' से निष्पादित करते हैं, विन्ध्याचल से सतपुड़ा की ओर हिमालय के मध्य आर्यावर्त की सीमा पढ़ते हैं; परन्तु इसी श्लोक के अर्थ ऋषि दयानन्द पूर्व-पश्चिम पर्वत शृंखला के मध्य रामेश्वरम् पर्यन्त स्वामी जी आर्यावर्त की सीमा का उल्लेख करते हैं। यहाँ एक घटना का उल्लेख प्रमाण रूप में ठीक होगा। स्वामी श्रद्धानन्द ने पं. लेखराम की जीवनी लिखते हुए एक घटना लिखी है कि सरस्वती हषद्वती नदियाँ आर्यावर्त की सीमा बनाती है और पं. लेखराम का ग्राम सरस्वती के दूसरी ओर पड़ता था, तो पण्डित लेखराम कहा करते थे—मेरे गाँव की इस ओर की नदी सरस्वती नहीं है, मेरे गाँव के बाद बहने वाली नदी सरस्वती है, जिससे उनका गाँव भी आर्यावर्त में आ जाता था। सचमुच में भारत में रहने वाले आर्य का गाँव आर्यावर्त से बाहर हो तो अच्छा तो नहीं लगेगा। इसी तर्क को लेकर मैंने एक बार अपने पिता जी से कह दिया—आपका गाँव आर्यावर्त में नहीं आता, एक क्षण वे स्तब्ध हुए और अगले ही क्षण बोले—तू नहीं जानता, मेरा गाँव आर्यावर्त में है क्योंकि जो संकल्प पाठ उत्तर भारत के गाँव-नगर में किया जाता है, वही मेरे गाँव में भी आदिकाल से हो रहा है—**आर्यावर्ते जम्बू द्वीपे भरतखण्डे**—सचमुच में उनका प्रमाण अकाट्य था। (शेष अगले अंक में) (साभार : परोपकारी से)

आर्य वीर विजय (मासिक)

25 नवम्बर-दिसम्बर, 2015

HR/FBD/67/2013-2015 dt. 1.1.13

Reg. No. [illegible] 34

सेवायाम्

श्रीमान्/श्रीमती

आर्य समाज, सैक्टर 7,
फरीदाबाद-121 006

उजली व चमकदार धुलाई

हाथ सुरक्षित

वनस्पति अखाद्य तेलों से निर्मित

निर्माता : **पुनीत उद्योग**

37- E, सैक्टर 6, फरीदाबाद-121006

दूरभाष : 0129-2241467, 4061389

ट्रेड मार्क मालिक :-

उत्तम कैमीकल उद्योग

प्लाट नं. 309, सैक्टर-24, फरीदाबाद पिन - 121006

आर्य वीर विजय, मनोहर लाल द्वारा आर्य वीर दल हरियाणा के लिए 'XYZ OFFSET PRINTERS', 279 सेक्टर 7 मार्किट, फरीदाबाद से छपवाकर, आर्यसमाज मन्दिर, सैक्टर 7, फरीदाबाद-121006 से प्रेषित।